IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

'उर्वशी'(दिनकर):काव्य सौंदर्य एवं सांस्कृतिक तत्व

Ratna Banerjee

स्वर्ग की इस रूप लावण्यमयी अप्सरा उर्वशी की कथा वहु प्राचीन है। ऋग्वेद, अर्थववेद, शुक्ल, यजुर्वेद, शतपथ ब्राह्मण, वृहद देवता एवं श्रौतसूत्र में उर्वशी का उल्लेख प्राप्त होता है । पौराणिक साहित्यों में भी इनका वर्णन मिलता है, यथा- महाभारत हरिवंश पुराण, विष्णु पुराण, पद्म पुराण एवं श्रीमद् भागवत में यह कथा पाई जाती है। ऋग्वेद के संवाद सूक्त (10 / 95) में पुरुरवा और उर्वशी की कथा संक्षिप्त एवं अस्पष्ट रूप से मिलती है। शतपथ ब्राह्मण (11- 5-1) में यह कथा कुछ विस्तार से है। इनके अतिरिक्त पुराणों में यह कथा विभिन्न प्रकार से मिलती है। कहते हैं कि मनु और श्रद्धा का पुत्र सुधुम्न शाप वश कन्या हो गई और उसका नाम इला पड़ा, इसका विवाह चंद्र के पुत्र बुध से हुआ। इनके पुत्र का नाम पुरुरवा पड़ा जिसे ऐल भी कहते हैं। राजा पुरूरवा सोम-वंश के आदि पुरुष हुए और उनकी राजधानी प्रयाग के पास प्रतिष्ठानपुर में थी।

उर्वशी की उत्पत्ति के विषय में दो अनुमान और मिलते हैं:- प्रथम उर्वशी समुद्र मंथन से प्राप्त हुई । द्वितीय नारायण ऋषि की तपस्या में विघ्न डालने के लिए इंद्र ने कुछ अप्सराओं को भेजा। क्रोधित ऋषि ने अपना जाघं या उरु ठोंका जिससे एक अप्सरा निकली जो सभी अप्सराओं से सुंदर थी। उरु से उत्पन्न होने के कारण इसका नाम उर्वशी पड़ा। प्रसंग वश उल्लेखनीय है, कि- भगीरथ की जांघ पर बैठने के कारण गंगा का एक नाम उर्वशी हुआ ।बद्री धाम में जो देवी पीठ है उसे भी उर्वशी पीठ कहते हैं। विक्रमोर्वशीय महाकवि कालिदास विरचित सुप्रसिद्ध नाटक है, इसके अनुसार पुरुरवा उर्वशी की कहानी में नया मोड़ दिया गया। कहानी में दिखाया गया कि उर्वशी शिवजी की पूजा करके सखियों के साथ लौट रही थी। मार्ग में केशी नामक दैत्य ने उसे पकड़ लिया।पुरूरवा वही पास से जा रहे थे। शोर- सुनकर वे दौड़े और उर्वशी को मुक्त कर लिया। उर्वशी कृतज्ञ हुई और उन पर आसक्त हो गई। यह नाटक 5 अंकों में विभाजित है। पांचवी अंक में च्यवन मुनि के आश्रम से उर्वशी पुरुरवा के पुत्र आयुष को लेकर राज सभा में उपस्थित होता है। राजा पुत्र को राज्य देकर वन जाना चाहते है। शाप मुक्त उर्वशी भी स्वर्ग जाने की तैयारी में है। इसी बीच नारद मुनि इंद्र का संदेश सुनाते हैं:- देवासुर संग्राम की आशंका है। अतः महाराज आप कहीं ना जाए एवं उर्वशी सदा आपके पास रहेगी।

_महाभारत के वनपर्व में अर्जुन जब स्वर्ग गए थे, तब एक दिन रात्रि काल उर्वशी सज धज कर अर्जुन के पास पहुंची, परंतु अर्जुन ने उन्हें गुरु पत्नी कह कर संबोधित किया। क्रोधित उर्वशी ने अर्जुन को कुछ समय नपुसंक होकर रहो कह कर श्राप दिया। इंद्र ने इस श्राप को 1 साल के लिए कर दिया। इस काल को विराट राजा के यहां अर्जुन ने संगीत शिक्षक बनकर निभाया। और भी अनेक स्थानों में इस कथा का कुछ ना कुछ रूपांतर मिलता है। माइकेल मधुसूदन दत्त ने 'पुरूरवार प्रति उर्वशी' नामक बंगला में लिखा। गुरुदेव रविंद्रनाथ की बंगला कविता 'उर्वशी' सुप्रसिद्ध है ,जिसमें भावनाओं को न्यूनतम प्रकाश दिया गया है।

दिनकर लिखी उर्वशी कथावस्तु को 5 अंकों में विभाजित है। और उसे अंको के क्रम से बांट कर रखने से उसकी यथार्थता का समुचित दिग्दर्शन होता है। दिनकर जी स्वयं लिखते हैं:- इस कथा को लेने में वैदिक आख्यान की पुनरावृत्ति अथवा वैदिक प्रसंग का प्रत्यावर्तन मेरा धैर्य नहीं रहा। मेरी दृष्टि में पुरुरवा सनातन नर का प्रतीक है, और उर्वशी सनातन नारी का उर्वशी शब्द का। 'उर्वशी'शब्द का कोष गत अर्थ होगा उत्कृष्ट अभिलाषा, अपरिमित वासना, इच्छा अथवा कामना। 'पूरूरवा' शब्द का अर्थ है, वह व्यक्ति जो नाना प्रकार से रव करें। नाना ध्वनियों से आक्रांत हो। कहते हैं निरुक्त के अनुसार –'आयु' का अर्थ भी मनुष्य होता है। इस दृष्टि से मनु और इडा तथा पुरुरवा और उर्वशी, वे दोनों ही कथाएं एक ही विषय की व्यंजित करती है। सृष्टि विकास कि जिस प्रक्रिया के कर्तव्य पक्ष का प्रतीक मनु और इडा का आख्यान है उसी प्रक्रिया का भावना-पक्ष पुरुरवा और उर्वशी की कथा में कहीं गई है।

उर्वशी : काव्य सौंदर्य एवं सांस्कृतिक तत्व

भारतीय साहित्य में काव्य पुरुष की कल्पना अत्यंत प्राचीन है। इसी आधार पर काव्य संगठन को दो भागों में विभाजित किया गया है -आत्मा और शरीर, काव्य-शास्त्र की भाषा में इन्हें क्रमशः भाव पक्ष और कला पक्ष कहते हैं। भाव पक्ष का संबंध काव्य की वस्तु से। और कला पक्ष का उसके आकार से है। जिस प्रकार वस्तु और आकार का अटूट संबंध है, उसी प्रकार भावपक्ष और कलापक्ष दोनों परस्पर इस प्रकार गुंथे हुए हैं कि इन्हें अलग नहीं किया जा सकता । जिसका शरीर के अभाव में आत्मा की और आत्मा के अभाव में शरीर की कल्पना निधान है उसी प्रकार आत्मा भाव पक्ष के अभाव में कलापक्ष के अभाव में भाव पक्ष की कल्पना नहीं की जा सकती इन दोनों का पार्थक्य केवल अध्यन की सुविधा के लिए स्वीकार किया गया है, अन्यथा किसी काव्य की गरिमा इन दोनों के समुचित समन्वय में ही निहित होती है। काव्य को पढने सुनने अथवा देखने से जो आनंद प्राप्त होता है उसे रस कहते हैं। यह आनंद लौकिक आनंद से भिन्न होता है, इसलिए काव्य द्वारा प्राप्त आनंद ब्रहमानंद सहोदर कहा गया है।रस के चार अंक होते हैं स्थाई -भाव, विभाव, अनुभाव और संचारी अथवा

कर्मचारी भाव। रस के नौ भेद हैं श्रृंगार, हास्य, करूण,रौद्र,वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शांत रस। आजकल वात्सल्य औरत भक्ति को मिलाकर रस की संख्या ग्यारह मानी जाती है।

उर्वशी का कला पक्ष

मनुष्य संभवत सौन्दर्योपासक प्राणी है। वाणी के विधान ने भी उसकी यही इच्छा कर्मशील है।वह चाहता है कि वह जो कुछ भी कहे सुने अथवा लिखे वह भी सौंदर्य विहीन ना हो जाए, इसलिए काव्य में अलंकार की योजना की गई। भूषित अथवा अलंकृत करने के साधन को अलंकार कहते हैं। सामान्यतः अलंकारों के तीन भेद होते हैं शब्दालंकार अर्थालंकार और उभायालंकार। शब्द को चमत्कृत करने वाले शब्दाश्रितअलंकार शब्दालंकार कहते हैं।अर्थ को चमत्कृत करने वाले अर्थाश्रित अलंकार कहे जाते हैं और शब्द तथा अर्थ दोनों को चमत्कृत करने वाले तथा दोनों में आश्रित रहने वाले अलंकार उभयालंकार होते हैं।'उर्वशी' में अलंकार योजना स्वाभाविक और अर्थवर्धक है।कवि का कहीं भी अलंकारों

के प्रति अनावश्यक मोह दृष्टिगोचर नहीं होता है। इसलिए इसमें अर्थालंकारों का ही आदित्य है। 'उर्वशी' की भाषा अत्यंत प्रौढ़ और भवनुसारिणी है,जो भावों को अपने अवाध प्रवाह में सर्वत्र प्रवाहित कर रही है। इसलिए 'उर्वशी' में अनेक पंक्तियां सूक्ति बन गई है। काव्य सौंदर्य का सर्वेक्षण करते हुए यह कहा जा सकता है कि यद्यपि इसमें काव्य -शास्त्रीय नियमों का प्रयोग नहीं मिलता तथापि अपने क्षेत्र में जो कुछ भी कहा गया है वह प्रशंसनीय है इस काव्य में भाव और कला दोनों का समुचित समन्वय हुआ है, किसी महान कवि अथवा उत्तम काव्य की सफलता भी यही है।

कलापक्ष का विवेचन

अपने भावों को दूसरों तक पहुंचाने की मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। उससे एक प्रकार का आनंद और संतोष मिलता है।यही कारण है कि वह भिन्न-भिन्न उपकरणों के द्वारा अपने भावों को प्रकट करता है ।जिस प्रकार मूर्तिकार, मूर्ति को सुंदर करने के लिए अनेक औजारों की और संगीतकार को, सुंदर संगीत के लिए अनेक वाद्य यंत्रों की आवश्यकता होती है , उसी प्रकार काव्य कार को अपनी सुंदर अभिव्यक्ति के लिए भाषा के अनेक तत्वों को संयोजन करनी पड़ती है। भाषा के यह तत्व कला पक्ष के अंतर्गत आते हैं। अलंकार ,भाषा, शब्द-शक्ति, गुण ,रीति, वृत्ति ,छंद आदि कलापक्ष के तत्व हैं।

उर्वशी का भाव पक्ष

उर्वशी का वर्ण्य विषय अथवा कथावस्तु राजा पुरूरवा और उर्वशी का प्रेमाख्यान है। भारतीय वाङ्मय के लिए यह कथा प्राचीन और सुपरिचित है। इस आख्यान का उद्देश्य मानव मन की सर्व प्रमुख समस्या काम का प्रस्तुतीकरण और उसका समाधान है मनुष्य का धर्म है पाश्विकता से ऊपर उठना और अपनी सहज प्रवृत्तियों पर मानवोचित उदत्तीकरण की छाप लगा देना। उर्वशी में यही बताया गया है कि कस्म का उदात्तरुप जो तन की सीमा का अतिक्रमण करके प्राप्त होता है मनुष्य को ग्राह्य है। इसी से उसके जीवन में प्रगति के शत- सहस्र निर्झर फूटते हैं उर्वशी का अंगी रस श्रृंगार रस है। इस रस में अन्य रसों की अपेक्षा अधिक व्यापकता होती है। इसलिए इसे रसराज स्वीकार किया गया है इस रस के दो भेद हैं -संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार इन्हें क्रमश संयोग और विप्रलम्भ भी कहते हैं। संयोग में नायक- नायिका एक साथ रह कर आनंद की उपलब्धि करते हैं। वियोग में वे दोनों बिछड़ जाते हैं। विप्रलम्भ श्रृंगार के चार भेद होते हैं -पूर्व राग, मान, प्रवास और करूण।उर्वशी में श्रृंगार रस के यह दोनों पक्ष दिखलाए गए हैं। उर्वशी को महाराज पुरुरवा एक राक्षस से बचा लेते हैं। उर्वशी उनके शौर्य और रूप को देखकर उन पर मुक्त हो जाती है। महाराज उसे उसकी सहेलियों के पास छोड़कर अपनी राजधानी प्रतिष्ठान पुर चले जाते हैं। उर्वशी प्रेम में अधीर होकर प्रतिष्ठान पूर्ण चली आती है। विचारणीय है कि इस प्रेम योजना में स्वाभाविकता कम और चिंतन अधिक है पुरुरवा और उर्वशी काम विषयक तार्किक भावनाओं में मिलन सुख पूर्णतया बिखर जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि इन दोनों के श्रृंगार वर्णन में वह स्वाभाविकता नहीं जो अपेक्षित थी कवि जब चिंतन और दर्शन की भाषा में बोलता है तब स्वाभाविकता नहीं,जो अपेक्षित थी। कवि जब चिंतन और दर्शन की भाषा में बोलता है तब स्वाभाविक ता नहीं रहती औशीनरी की विरह व्यथा अपेक्षाकृत स्वाभाविक और मर्मस्पर्शी है। इसका कारण यही है कि कवि ने उसे अपनी चिंतन का माध्यम नहीं बनाया है।

उर्वशी में सांस्कृतिक तत्व

सभ्यता और सांस्कृतिक एक ही वस्तु के दो पहलू हैं इन दोनों में तात्विक अंतर आवश्यक है। यदि सभ्यता शरीर है तो संस्कृति उस में निवास करने वाली आत्मा का प्रतिरूप है। पाणिनि के अनुसार सभा में सभ्य आचरण करने वाले सभ्य कहलाते हैं ।सभ्यता सभ्य की भाववाचक संज्ञा है। संस्कृति का अर्थ है सम्यक उन्नति अथवा क्रिया। इस प्रकार सभ्यता की अपेक्षा सांस्कृति का क्षेत्र अधिक व्यापक है। यदि एक ही वाक्य में उन दोनों की परिभाषा की जाए तो मनुष्य की भौतिक क्षेत्र की उन्नति सभ्यता एवं मानसिक क्षेत्र की प्रगति संस्कृति कहलाती है। दूसरे शब्दों में संस्कृति व सूक्ष्म भावनात्मक तत्व है, जो हृदय की प्रेरणा से बाह्य आचारों में प्रस्फुटित होकर सूक्ष्मता के ही अधिक निकट रहता है।सभ्यता वह तत्व है, जो हृदय की अपेक्षा बुद्धि से अधिक संबंध रखता है। सभ्यता भौतिकता की ओर अधिक झुकी होती है इसीलिए संस्कृति की अपेक्षा सभ्यता अधिक परिवर्तनशील है। संस्कृति के वास्तविक दर्शन हमें लोग जीवन में ही होते हैं। आधुनिक सभ्यता के चोले में रंगे हुए लोग जिन्हें रूढिया तथा अंधविश्वास कहते हैं असली अर्थ में वही सच्ची संस्कृति है। उदाहरणार्थ हमारे पर्व, पूजा पद्धति त्योहार व्रतादि आदि के पीछे वैज्ञानिक तथ्य है, जिन पर शोध भी हो रहा है, हमारी संस्कृति के अपरिहार्य अंग है।

साहित्य और संस्कृति

जिस प्रकार ग्राह्य यंत्र संपूर्ण वायुमंडल में से अपने मतलब की सूचनाओं को ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार कवि भी अपने समय के वायुमंडल को अपनी सूक्ष्म दृष्टि से देखता है और उसे अपने दृष्टिकोण से अभिव्यक्त करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि साहित्य जीवन की अभिव्यक्ति है। सच्चा कवि जीवन की वास्तविकताओं को जड़ से पकड़ता है और कल्पना का आधार देकर उसमें मौलिकता प्रदान करता है।

दिनकर जी की उर्वशी वेद पुराण कालीन कथा के आधार पर उसकी रचना की गई थी ,अतः कवि ने तत्कालीन सांस्कृतिक झांकी भी उसी अनुसार प्रस्तुत की है तथा उन्हें काव्य में दर्शाया है उस समय समाज में आश्रम व्यवस्था थी जो चार भागों में बांटा था, ब्रह्मचर्य ,गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास उस काल आठ प्रकार के विवाह प्रचलित थे। ब्रह्म विवाह, प्रजापत्य विवाह,आर्य, देव, आसुर, गंधर्व, राक्षस, और पैशाच विवाह। पुरुरवा और औशीनरी का ब्रह्म विवाह था। पुरूरवा उर्वशी का प्रेम विवाह (गान्धर्व विवाह) था। कहीं-कहीं राक्षस विवाह भी होता था, जिसका जिक्र आता है। (कन्या को जबरदस्ती लाकर विवाह करना) इसके अतिरिक्त तत्कालीन समाज में विभिन्न संस्कार थे, जिनका उस समाज में श्रद्धा से पालन होता यथा:-1. शिशु का गोचरण 2.वेद पाठ 3. विप्र पूजा तथा मान 4.

याचकों को दान।

अंत में यह कहना पड़ेगा कि 'उर्वशी' काव्य- सौंदर्य की सफलता के साथ-साथ सांस्कृतिक पक्ष का भी सबल प्रमाण प्रस्तुत किया गया है।

संदर्भ एवं पुस्तकें

- **भारतकोष, खंड प्रथम पृष्ठ 66 - नरेंद्र नाथ भट्टाचार्य**
- **उर्वशी की भूमिका पृष्ठ 1 -रामधारी सिंह दिनकर**
- **दिनकर और उनकी उर्वशी, पृष्ठ 25 - देवराज सिंह भाटी**
- **वही -भूमिका पृष्ठ ख**
- **वही - भूमिका पृष्ठ ख**
- **वही - पृष्ठ 52**